THE HINDU

Date:27-04-23

Promising Bill

Rajasthan's initiative on a gig workers' welfare board heralds good tidings.

Editorial

With an estimated eight million people employed in an industry built on the back of the smartphone revolution, "gig" work has become a major source of jobs for youth in India. It goes without saying that in a country where informal labour and unemployment have defined the nature of the jobs market in the last decade, the gig economy has been a beneficial outlet of employment. This is especially true of youth and migrant workers, as they seek a ready and quick means of securing finances and flexible hours — an option used by informal workers who have used gigs for moonlighting. With growing smartphone use and a reliance on apps for daily needs and purposes, the gig economy is only set to flourish in terms of usage and opportunities. Yet, increased competition among platforms and the availability of a cheap labour force have led to a lowering of incentives for gig workers even as their workload and uncertainty of work hours have increased significantly relative to pay, which has also become insufficient for many. Adding this to the fact that gig workers are not recognised as "workers" but partners by most aggregating platforms and that they lack any social security or related benefits due to them as "workers", working conditions have become increasingly harsh in an industry that is no longer a fledgling one. This is now evident in growing flash strikes by gig workers.

Seen in this light, the decision by the Rajasthan government, to deliver a Rajasthan Platform-based Gig Workers (Registration and Welfare) Bill, 2023, should be welcomed, even if it will be introduced before the Assembly elections later this year. While the draft Bill envisages a "welfare board" that will design welfare policies and hear grievances of gig workers on a piece rate basis, the specificities of the policies and how they might benefit the workers are still un clear. The board is expected to work towards a social welfare corpus which will be financed by a cess on the digital transactions made by consumers on the platforms that utilise the gig worker labour. This schema is not unfamiliar — platform workers in the transport sector in Thailand and Malaysia, for instance, benefit from health and accident insurance as well as social security that is financed by a deduction of 2% for every ride. Recently, the Union government passed the Code on Social Security (one of four labour codes), which also allowed for some social security for gig workers, but the scheme only remains on paper without proper implementation. If Rajasthan's pioneering draft Bill takes off, other States could be compelled to utilise similar measures to ensure the welfare of gig workers.

Date:27-04-23

नासूर बने नक्सली

संपादकीय

नक्सलियों से बातचीत करके उन्हें सही राह पर लाने की कोशिश करना वक्त की बर्बादी है। दंतेवाड़ा की घटना यही स्पष्ट करती है कि नक्सली न केवल आंतरिक सुरक्षा के लिए चुनौती बने हुए हैं बल्कि उन तक अत्याधुनिक हथियार भी पहुंच रहे हैं। यह भी साफ है कि उनके दुस्साहस का दमन करने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। नक्सलियों की गतिविधियों के लिए कुख्यात छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा जिले में जिस तरह डिस्ट्रिक्ट रिजर्व फोर्स के एक वाहन को बारूदी सुरंग से उड़ा दिया गया और जिसके चलते 10 जवानों और एक वाहन चालक को अपनी जान गंवानी पड़ी, उससे यही पता चलता है कि नक्सली अब भी बेलगाम बने हुए हैं। यह घटना इसलिए अधिक चिंताजनक है, क्योंकि पिछले कुछ समय से एक तो नक्सलियों की सक्रियता कम होती दिख रही थी और दूसरे, ऐसे दावे भी किए जा रहे थे कि उनके दुस्साहस का दमन करने में सफलता मिली है। दंतेवाड़ा की घटना यही स्पष्ट करती है कि नक्सली न केवल आंतरिक सुरक्षा के लिए चुनौती बने हुए हैं, बल्कि उन तक अत्याधुनिक हथियार भी पहुंच रहे हैं। यह भी साफ है कि उनके दुस्साहस का दमन करने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है। यह शेष काम प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए। इसमें केंद्र एवं राज्य सरकारों को हर स्तर पर सहयोग और समन्वय कायम करना चाहिए। इसी के साथ इस सवाल का जवाब भी खोजा जाना चाहिए कि नक्सली एक बार फिर वैसी ही घटना को अंजाम देने में कैसे सफल हो गए, जैसी वह इसके पहले भी कई बार कर चुके हैं?

आखिर यह कैसे संभव हो गया कि नक्सलियों ने दंतेवाड़ा जिले के अरनपुर थाने से महज दो किमी दूर एक सड़क पर बेहद शक्तिशाली बारूदी सुरंग लगा दी? यह तथ्य इसलिए और अधिक चिंता पैदा करने वाला है, क्योंकि जिस सड़क पर बारूदी सुरंग लगाई गई, वह कोई निर्जन रास्ता नहीं था। स्पष्ट है कि कहीं न कहीं सुरक्षा और चौकसी में चूक हुई। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अतीत में भी इस तरह की चूक से कई घटनाएं घट जाने के बाद भी जरूरी सबक नहीं सीखे जा रहे हैं। इसकी तह तक जाने की जरूरत है कि क्या नक्सल विरोधी अभियान के लिए तय किए गए सुरक्षा संबंधी मानकों का पालन किया गया? इसी तरह इस पुराने सवाल का जवाब भी खोजना होगा कि नक्सली हर तरह के घातक हथियार एवं विस्फोटक हासिल करने में कैसे समर्थ हैं और उन्हें स्थानीय स्तर पर समर्थन मिलने के कारण क्या हैं? इन कारणों का निवारण किए बगैर बात बनने वाली नहीं है। नक्सलियों के साथ उनके दबे-छिपे समर्थकों और उन्हें वैचारिक खुराक देने वालों के प्रति भी कठोरता का परिचय देना होगा। नक्सली इसलिए किसी नरमी के पात्र नहीं हो सकते, क्योंकि वे ऐसे घातक शत्रु हैं, जिनका उद्देश्य बंदूक के बल पर मनमानी करना है। वे नक्सलवादी विचारधारा की आड़ में लूट, हत्या और उगाही का धंधा करने वाले गिरोहों के अलावा और कुछ नहीं। उनसे बातचीत करके उन्हें सही राह पर लाने की कोशिश करना वक्त की बर्बादी ही है। अच्छा होगा कि केंद्र और राज्य सरकारें उनके संपूर्ण सफाए की कोई ठोस रणनीति बनाएं।

Date:27-04-23

माफिया और राजनीति की मिलीभगत

प्रदीप सिंह, (लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

भारतीय राजनीति में अपराध और राजनीति दूध और पानी की तरह घुल-मिल गए हैं। अपराधी साथ न हों तो नेता को लगता है कुछ कमी है। इसीलिए राजनीति में सबको चाहिए एक माफिया। माफिया वोट दिलाने वाला हो तो सोने पर सुहागा और ऊपर से मुसलमान हो तो फिर क्या ही कहना। उसे संरक्षण और प्रोत्साहन देकर मान लिया जाता है कि मुसलमानों के लिए जितना किया जा सकता है, कर दिया। संदेश दिया जाता है कि देखो तुम्हारे समाज के माफिया को भी हम गले लगाते हैं। अब वोट नहीं दोगे तो कब दोगे? 'मर्ज बढ़ता गया, ज्यों ज्यों दवा की' वाली कहावत यूं ही नहीं बनी। राजनीति के अपराधीकरण को रोकने की बातों के बीच बिहार सरकार ने जिला अधिकारी जी. कृष्णैया की हत्या में सजा काट रहे एक बाहुबली नेता आनंद मोहन सिंह को बाहर निकालने के लिए नियम ही बदल दिया। मुख्यमंत्री नीतीश कुमार इस पर ऐसे खुशी मना रहे हैं जैसे कोई बड़ी उपलब्धि हासिल कर ली हो। नीतीश राज में थोड़ी शराब पीने वाला जेल में रहेगा और हत्या की सजा भोग रहा अपराधी स्वतंत्र। जंगलराज ने आनंद मोहन और शहाबुद्दीन जैसे तमाम माफिया पैदा किए। अब सुशासन बाबू उन्हें महिमामंडित कर रहे हैं।

कानून के राज पर जब वोट बैंक भारी पड़ जाता है तो राजनीति के अपराधीकरण को कोई रोक नहीं सकता। माफिया और गुंडों को नेता अपनी सुरक्षा की सीपी में मोती की तरह पालता है। उसकी कीमत नेता ही समझता है। माफिया डान अतीक अहमद और उसका भाई मारा गया। समाज से अपराधियों की संख्या कम हुई, लेकिन जिन्होंने उसका इस्तेमाल किया, वे गमजदा हैं। कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें लग रहा है कि मरा अतीक भी उन्हें वोट दिला सकता है। इसलिए वे तरह-तरह की बातों से उसका बचाव कर रहे हैं। वे दरअसल अतीक का नहीं, बल्कि अपने वोट बैंक का बचाव कर रहे। नेता की जान वोट बैंक नाम के तोते में बसती है। अब अतीक जैसों की सप्लाई कम हो रही है तो जेल से निकालकर लाया जा रहा है। ये माफिया बड़े जतन से तैयार किए जाते हैं। इन्हें कानून की नजर से बचाकर रखा जाता है। राजनीतिक संरक्षण से इनके आतंकी साम्राज्य को स्थापित किया जाता है। फिर एक समय आता है जब ये कानून से नहीं, बल्कि कानून इनसे डरता है। यह इनकी परम अवस्था होती है। इनको पालने वाला नेता निश्चिंत हो जाता है कि अब यह अपनी समानांतर सरकार चला सकता है। जरा कल्पना कीजिए उस व्यवस्था की, जिसमें पुलिस वाले गुंडे को सलामी देते हों और न्यायाधीश खौफ के मारे उसका मुकदमा सुनने से इनकार कर देते हैं।

माफिया के पनपने और उसके ताकतवर होने से ज्यादा चिंता की बात है उसके पैरोकारों की बढ़ती जमात। राजनीति के पतन का अनुमान लगाइए कि अतीक के मारे जाने पर उप्र के पूर्व मुख्यमंत्री अखिलेश यादव कहते हैं कि भाजपा सांप्रदायिक सौहार्द बिगाड़ रही है। मतलब यह कि अतीक सांप्रदायिक सौहार्द का प्रतीक था। सवाल उठाए जा रहे हैं कि पुलिस सुरक्षा में मार दिया गया। इस देश में इससे ज्यादा कड़ी सुरक्षा में देश की प्रधानमंत्री की हत्या हो गई। देश के पूर्व प्रधानमंत्री और पंजाब के तत्कालीन मुख्यमंत्री की हत्या हो गई। पूर्व सेनाध्यक्ष एएस वैद्य की हत्या हो गई। यहां दो

गुंडों के मारे जाने पर मातम मनाया जा रहा है, जिसके दो बेटे विभिन्न अपराधों के आरोप में अभी जेल में हैं और बीवी फरार है।

देश के दो राज्यों की स्थिति देखिए। उत्तर प्रदेश में जहां माफिया और गुंडे त्राहि-त्राहि कर रहे हैं तो बगल के बिहार में माफिया बम-बम है। यही अंतर है कानून के राज और जंगलराज में। बिहार का घटनाक्रम बता रहा है कि माफिया का राज आता है तो कानून का राज दुम दबाकर पिछले दरवाजे से निकल जाता है। वहीं, जब कानून अपने रौद्र रूप में आता है तो अपराधियों को छिपने के लिए पूरी धरती कम पड़ने लगती है। एक राज्य में पुलिस दौड़ा रही है और अपराधी भाग रहे हैं तो दूसरे में अपराधी के स्वागत में नेता पलक-पांवड़े बिछाए खड़े हैं। सवाल है कि दो राज्यों में इतना बड़ा अंतर क्यों है? इसी से समझ में आ सकता है कि राजनीति का अपराधीकरण रुक क्यों नहीं रहा? पहला प्रश्न है कि राजनीति के अपराधीकरण को रोकना कौन चाहता है, बल्कि ज्यादा सही सवाल यह होगा कि इसे रोकना कौन चाहेगा? वही रोकना चाहेगा जो माफिया को वोट बैंक के रूप में नहीं देखता, जो माफिया का आर्थिक साम्राज्य बनवाकर उसका दोहन नहीं करता। जो अवैध कब्जे, हत्या, लूट और दुष्कर्म के खिलाफ 'जीरो टालरेंस' की नीति पर चलने की इच्छाशक्ति रखता हो। उत्तर प्रदेश और बिहार में यही फर्क है। संगठित अपराध और अपराधियों के उन्मूलन की नेतृत्व के स्तर पर इच्छाशक्ति उत्तर प्रदेश सरकार में नजर आती है तो बिहार में इसका ठीक उलटा है। वहां अपराधी को गले लगाने की आतुरता दिखती है।

राजनीति के अपराधीकरण को रोकने और आरोपित नेताओं को जल्दी सजा दिलाने के लिए विशेष एमपी-एमएलए अदालतें बनीं, लेकिन बात आगे बढ़ नहीं रही। अब मांग की जा रही है कि अपराध साबित होने और सजा मिलने पर न केवल आजीवन चुनाव लड़ने पर रोक लगे, बल्कि चुनाव प्रचार या पार्टी पदाधिकारी बनने पर भी प्रतिबंध लगे। चुनाव सुधार और कानून में बदलाव की तत्काल और सख्त जरूरत है। यह उम्मीद छोड़ देनी चाहिए कि पार्टियां अपनी सामाजिक जिम्मेदारी समझेंगी और ऐसे लोगों से दूरी बनाकर रखेंगी, क्योंकि जाति और मजहब की राजनीति के साथ जाति और संप्रदाय के माफिया का लोभ नेताओं के लिए छोड़ना आसान नहीं है।

अतीक और उसके भाई का मामला ज्वलंत प्रमाण है कि देश का राजनीतिक जीवन कितना दूषित हो चुका है। एक माफिया के मारे जाने के बाद भी उसके समर्थन में जिस तरह के तर्क प्रस्तुत किए जा रहे हैं, वे किसी आपराधिक कृत्य से कम नहीं हैं। हाल में सुप्रीम कोर्ट ने प्रतिबंधित संगठनों से जुड़े अपने फैसले में कहा कि उनसे संबंध रखना भी अपराध की श्रेणी में आता है। ऐसे ही माफिया से संबंध रखने वाले नेताओं को सजा दिलाने के लिए जब तक कानून नहीं बनेगा, तब तक माफिया राज रुकने वाला नहीं है।

जनसत्ता

Date:27-04-23

नक्सली कहर

संपादकीय

छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा में नक्सलियों के हमले में ग्यारह जवानों की शहादत से एक बार फिर यही जाहिर हुआ है कि राज्य में इस मसले के हल के लिए चलने वाली तमाम कवायदों के बावजूद हिंसक समूहों की मौजूदगी कायम है। नक्सली आज भी घात लगा कर इतना बड़ा नुकसान पहुंचाने में कामयाब हो जा रहे हैं। हालांकि ऐसी हर घटना के बाद सरकार और संबंधित महकमों की ओर से यही भरोसा दिया जाता है कि इसके जिम्मेदार लोगों को बख्शा नहीं जाएगा और नक्सलियों के खात्मे के लिए अभियान तेज किया जाएगा। मगर सवाल है कि हर कुछ समय बाद नक्सली समूह सुनियोजित हमले को अंजाम देकर बड़ा नुकसान कर देते हैं, उसमें जवानों की जान चली जाती है तो इसे किस तरह की सुरक्षा-व्यवस्था के तौर पर देखा जाएगा! गौरतलब है कि दंतेवाड़ा के एक इलाके में नक्सलियों की मौजूदगी की सूचना के बाद डीआरजी बल यानी डिस्ट्रिक रिजर्व गार्ड की एक टुकड़ी को वहां भेजा गया था। वापसी के क्रम में नक्सलियों ने अरनपुर मार्ग पर 'इम्प्रोवाइज्ड एक्सप्लोसिव डिवाइस' यानी आइईडी विस्फोट कर दिया, जिसमें डीआरजी के दस जवान और एक वाहन चालक की जान चली गई। इस हमले से साफ है कि डीआरजी जवानों के अभियान की जानकारी नक्सलियों को पहले लग गई थी और इसीलिए उन्होंने योजना बना कर यह हमला किया।

यह इस तरह की कोई पहली घटना नहीं है। ऐसे हमले के बाद सरकार और सुरक्षा बलों की सख्ती जब बढ़ती है तब ऐसे समूह कुछ वक्त तक शांत पड़ जाते हैं, लेकिन फिर मौका मिलते ही हिंसक हमले के जरिए अपनी मौजूदगी दर्ज कराने की कोशिश करते हैं। बुधवार को हुई घटना में जिस डीआरजी के जवानों की जान गई, वे छत्तीसगढ़ पुलिस के खास जवान हैं, जिन्हें केवल नक्सलियों से लड़ने के लिए भर्ती किया गया है। इस प्रशिक्षित समूह की विशेषता यह है कि इस समूह में आत्मसर्पण करने वाले और बस्तर के वातावरण में पले-बढ़े लोग शामिल होते हैं। ये लोग चूंकि जटिल जंगल और उसमें अपनी गतिविधियां संचालित करने वाले नक्सलियों के काम करने की प्रकृति को समझते हैं, इसलिए उनके जरिए कई मौकों पर अहम कामयाबी दर्ज की गई है। शायद यही वजह है कि डीआरजी के जवान खासतौर पर नक्सलियों के निशाने पर थे। हालांकि इस तरह के हमलों में कई मौकों पर सीआरपीएफ के जवानों पर भी घातक हमले किए गए हैं।

विचित्र यह है कि इस तरह की हिंसा के सहारे व्यापक राजनीतिक मुद्दों का हल खोजने का दावा करने के बावजूद नक्सली समूह अपने लक्षित तबकों के बीच भी किसी ठोस हल का रास्ता नहीं दर्शा पाए हैं। दूसरी ओर, इन नक्सलियों के घातक हमलों से निपटने के लिए सरकार की ओर से अब तक जितनी भी कोशिशें और नीतिगत पहलकदमी हुई, उनका असर सिर्फ तात्कालिक महत्त्व के रूप में ही दर्ज किया जा सका। आखिर यह कैसे संभव हुआ कि दंतेवाड़ा जैसी संवेदनशील जगह में सुरक्षा बलों की टीम किसी अभियान पर गई और उसकी पूरी खबर नक्सलियों को लग गई? जाहिर है, हिंसा को ही अपना राजनीतिक हथियार मानने वाले नक्सली समूहों के खिलाफ सुरक्षा के प्रत्यक्ष मोर्चों के साथ-साथ एक मजबूत और सुगठित खुफिया तंत्र वक्त की जरूरत है। लेकिन इस पहलू पर भी शायद ठोस और रणनीतिक तरीके से काम करने की जरूरत है कि बेहद मुश्किल भौगोलिक क्षेत्र के रूप में जंगल में अपनी गतिविधियां संचालित करने वाले नक्सलियों के बरक्स प्रभावित इलाकों में अभावों और मुश्किल में जीवन गुजारते आम लोगों के भीतर सरकार और प्रशासन के प्रति भरोसा पैदा किया जाए, ताकि जरूरत पड़ने पर वे नक्सलियों से निपटने में एक अहम सहयोगी की भूमिका निभा सकें।

Live हिन्दुस्तान .com

Date:27-04-23

कृत्रिम बुद्धिमत्ता पर नियंत्रण से ही आम लोगों को फायदा

प्रांजल शर्मा, (डिजिटल नीति विशेषज्ञ)

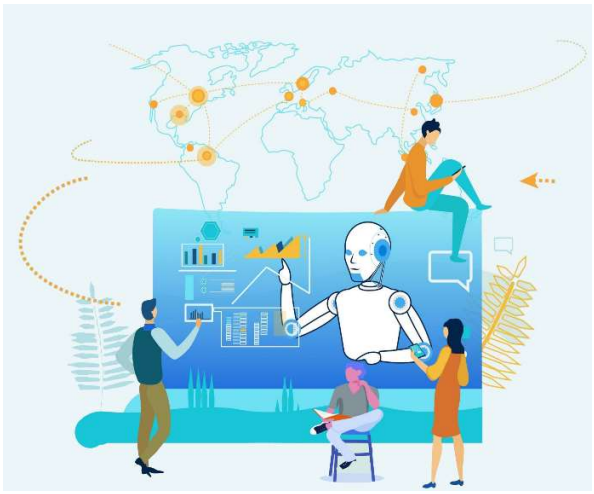

जिस तरह से अंतरिक्ष की दौड़ में दुनिया मसरूफ है, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, यानी आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस (एआई) को विकसित करने को लेकर भी वह उसी तरह व्यस्त है। अमेरिका और चीन में तमाम कंपनियां नए प्रकार के एआई उपकरणों और प्लेटफॉर्म में निवेश कर रही हैं, जो व्यापार, सरकार व समाज की मदद कर सकते हैं। हालांकि, कई बड़े उद्योगपति और तकनीकीविद् इससे भयभीत भी हैं। एलन मस्क सहित 1,000 से अधिक ऐसे लोगों ने उन्नत एआई उपकरणों को विकसित न करने की गुजारिश की है। अपने 'खुले खत' में उन्होंने चेताया है कि ये 'समाज और मानवता के लिए बड़ा खतरा' बन सकते हैं। जाहिर है, जेनरेटिव आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की यह नई लहर रोमांचक तो है, लेकिन समाज के लिए चुनौती भी पैदा कर सकती है।

चैटजीपीटी इसी जेनरेटिव एआई का उदाहरण है। यह इंसानों की तरह हरेक प्रश्न के उत्तर दे सकता है। इसका इस्तेमाल मुद्दों का आकलन करने और विश्लेषण में भी किया जा सकता है। इतना ही नहीं, यह इंसानों जैसे तर्क का इस्तेमाल करके जवाब भी दे सकता है। जैसे, यह न्यायालय के आदेश का अध्ययन करके प्रश्नों के उत्तर दे सकता है। यह बीमा पॉलिसी के दावे को भी पढ़ सकता है और बता सकता है कि दावे का भुगतान किया जाना चाहिए अथवा नहीं? इसी कारण जेनरेटिव एआई से कई उद्योगों के प्रभावित होने की बात भी कही जा रही है। मुमकिन है, यह मौजूदा विज्ञापनों का विश्लेषण करके नए विज्ञापन बनाए, जिससे कंपनियों के लिए नए दर्शकों तक पहुंचना आसान हो सकता है। यह नए आइडिया और विचार पैदा कर सकता है, जिनका इस्तेमाल करके कलाकारों और डिजाइनरों को नए काम में मदद मिल सकती है। मनोरंजन के क्षेत्र में ही यह नए वीडियो गेम, फिल्म और टीवी शो बना सकता है, जिससे कंटेंट क्रिएटर्स को नए दर्शक मिल सकते हैं। कानूनी मामलों में ही यह डाटा का विश्लेषण कर सकता है और उसका इंसानों की तरह विश्लेषण कर सकता है। डाटा को चार्ट और ग्राफ में बदलने में भी यह सक्षम हो सकता है।

ऐसे में, एआई समर्थक यह स्वाभाविक कहते हैं कि इसे इंसानी कामों के लिए बतौर सहायक इस्तेमाल किया जाना चाहिए। जैसे, एक वकील तमाम फैसलों को पढ़ने या केस फाइल करने संबंधी विश्लेषण के लिए चैटजीपीटी की मदद ले सकता है। मगर, डर यह भी है कि इसका इस्तेमाल गलत कामों में हो सकता है। कुछ स्कूलों ने अपने विद्यार्थियों के लिए चैटजीपीटी का उपयोग प्रतिबंधित कर दिया है, क्योंकि वे इसके माध्यम से लेख नकल कर रहे थे। इतना ही नहीं, चिंता यह भी है कि लोगों के बीच गलत सूचनाओं को फैलाने में इसका इस्तेमाल किया जा सकता है। चूंकि चैटजीपीटी

मानव व्यवहार की नकल कर सकता है, इसलिए यह फर्जी सूचनाएं गढ़ सकता है और साइबर सुरक्षा के लिए जोखिम पैदा कर सकता है। जरा सोचिए कि तब 'फिशिंग' हमले (जिसमें लोगों को ठगने के लिए फर्जी लिंक वाले ई-मेल आदि भेजे जाते हैं) कितनी मजबूती से किए जाएंगे। डाटा लीक भी इससे जुड़ा एक बड़ा खतरा है। हाल ही में, सैमसंग के कुछ कर्मचारियों ने विश्लेषण के लिए कुछ संवेदनशील जानकारियां चैटजीपीटी में दर्ज की, लेकिन ये लीक हो गईं, क्योंकि डाटा का इस्तेमाल चैटजीपीटी खुद सीखने के लिए करता है।

चैटजीपीटी का दुरुपयोग न हो, यह सुनिश्चित करने के लिए विशेषज्ञ सरकारी नियमन की मांग कर रहे हैं। अमेरिकी सरकार ने इससे जुड़ी सामाजिक चुनौतियों से निपटने की तैयारी कर ली है। भारत भी एआई के इस्तेमाल को बढ़ावा दे रहा है। खबर है कि नई संसद 'डिजिटल' होगी, जिसमें एआई पर आधारित 'स्पीच टु टेक्स्ट इंजन' संसदीय कार्यवाही के दौरान तुरंत अनुवाद कर देगा। ऐसे में, यह सुनिश्चित करने के लिए नियम बनाने की मांग हो रही है कि लोग एआई और चैटजीपीटी से गुमराह न हों। बेशक, एआई की राह रोकना सही नहीं होगा, लेकिन सरकार, नियामक संस्थाओं और कंपनियों को उन प्रौद्योगिकियों से समाज की सुरक्षा के उपाय जरूर करने चाहिए, जिनको नियंत्रित करना और समझना फिलहाल मुश्किल है।